सम्वत्सर चक्र

डॉ. मनीषा शर्मा
प्राचार्य
राजस्थान शिक्षक प्रशिक्षण विद्यापीठ, जयपुर

सूर्यनारायण बोले कि साधारण मनुष्यों को मैं एक चमकता हुआ गोला सा दिखता हूं जो पृथिवी के चारों ओर फिरता है परन्तु विद्वान मुझको ब्रह्म की साक्षात मूर्ति मानते हैं और मेरे अनन्त तेज का भली प्रकार ध्यान करतेहुए चकित हो जाते हैं और अपनी वृत्ति को मुझमें लीन कर के सूर्यलोक से ऊपर के लोकों का अनुभवी दर्शन करतें हैं: जैसे द्वारपाल की आज्ञाविना कोई घर में नही घुस सकता वैसे ही मेरी सहायता विना ब्रह्मलोक की प्राप्ति दुर्लभ है जिनकी पहुंच मुझ तक नहीं होती है वह चन्द्रलोक तक जाकर फिर मर्त्युलोक में लौटआते हैं और चक्र मे रहते हैं। यह बचन वेद उपनिषद और महापुरुषों का सिद्ध किया हुआ है और ठीक है: मेरी मूर्ति के विचारने से प्रतीत होगा कि दिन रात का भाव मुझ मे नही जिससे काल का उन्मान किया जावे मैं नित्य एक रूप से अवस्थित हूं और अपने अनन्त तेज से पृथिवी चन्द्रमा और अन्य तारागणों को प्रकाश देता हूं और उष्णता पहुंचाता हूं जिनके द्वारा उनके सब कार्य सिद्ध होते हैं। अव जो मेरा संबंध पृथिवी के साथ है उसका वर्णन इस प्रकार है कि पृथिवी की एक घूम से दिन और रात्रि का भाव होता है अर्थात् उसका जो अर्थभाग सूर्य के सन्मुख आता है उसमे दिन भासता हैं और जो उसके दूसरे ओर होता है वहाँ रात्रि की प्रतीती होती है।

पृथिवी का धुरा चकई की तरह खडा हुआ नही फिरता शिशुमार (पानी के जन्तु) के समान तिर्छा होके चक्रवत फिरता है और उसके तिर्छेपन से दिन रात की घटत वढत होती रहती है। सूर्य और पृथिवी के आकारों के मध्य में बारह घरों के अन्दर पीले रंग के बारह चिन्ह दिखते हैं. वह दिन के घटे और बढे परिमाण को संवत्सरपर्यन्त जताते हैं. और इसी प्रकार पृथिवी के आकारों के बाहर बारा काले चिन्ह रात्रि के घटे ओर बढे परिमाण को बताते हैं अर्थात् दिन और रात दोनो का परिमाण ६० घड़ी अथवा २४ घंटे का है परन्तु इस समय के अन्तर जब दिन बढ़ता है तो रात घट जाती है और जब रात बढ़ती है तो दिन घट जाता है, मकर की संक्रान्ति में रात सबसे बड़ी और दिन सबसे छोटा होता है और

कर्क की संक्रान्ति में दिन सबसे बड़ा और रात सबसे छोटी होती है मेष और तुला की संक्रान्ति में दिन और रात्रि का परिमाण एक सा होता है।

काले चिन्हों के बाहर मेष वृषादि १२ राशियों की मूर्तियाँ इस चित्र में बनी हुई हैं और वह आकाश के उस देश को १२ कल्पित भागों पर विभक्त दिखाती हैं जिसमें पृथिवी सूर्य के चारों ओर चक्रवत् फिरती है। मूर्तियों के परस्पर भेद का कारण यह है कि ज्योतिषविद्या के सिद्धकर- निकले प्राचीन ऋषियों ने अपने पुरुषार्थ द्वारा संवत्सर पर्यन्त रात्रि के समय आकाश को देखा है और उसके पृथक देशों में तारों के समूह से १२ आकार बनते हुए पाये हैं जिनके अनुसार उन्होंने राशियों की मूर्तियां स्थापित की हैं और उनके नाम रखे हैं। १२ राशियों को १२ झन्डियों के समान जानना चाहिये कि उनके द्वारा पृथिवी से आकाश मार्ग नापा गया है परंतु इस काल में पुरुषार्थ और विचारशक्ति के निर्बल होने से मनुष्य ज्योतिष के सिद्धांतों को समझ नही सकते हैं। उसका शोधन तो कैसे कर सकें ? ज्योतिष ब्रह्मविद्या का अंग है और तत्ववित होने के लिये इसका विचारना आवश्यक है।

राशियों के बाहर चैत्र वैशाखादि मास चंद्रमा की गति के अनुसार दिखाये गये हैं और उनका समय राशियों से मिलान नही खाता अर्थात् चंद्रमास और राशियों का संबंध थोड़ा थोड़ा पलटता रहता है परंतु तीन वर्ष के अंत में दोनो का समय भेद जाता रहता है, जैसे सूर्य के पट चक्र में राशियों की १२ झंडियों का लगा होना ऊपर कहा गया है। इसी प्रकार चंद्रमा के खड़े चक्र की दिशा में २७ झंडिया जिनका नाम नक्षत्र है सिद्ध की गयी हैं और इन दोनों से आकाश की प्रत्येक देश का विभाग हो जाता है और सर्वग्रहों के स्थान निश्चित होते हैं। राशियों के पटचक्र पर चंद्रचक्र खड़ा होने के कारण सूर्यलोक से चद्रलोक ऊंचा कहा जाता है।

चन्द्र मास के बाहर की ओर षट् ऋतुओं के टुकड़े दिखलाये गये हैं जिनके मिलने से एक वर्ष बनता है और जिनका समय दो दो संक्रातियों के तुल्य है और रंग पृथक पृथक है, प्रथम वसंत का रंग पीला है क्योंकि उस ऋतु में जो सूर्य की किरणें पृथिवी पर पड़ती हैं वह पीले रंग की दिखती हैं और उनके अनुसार सरसों आदि के पीले रंग के फूल अत्यंत खिलते हैं।

दूसरी ग्रीष्मऋतु है जिसमे सूर्य की किरणों का रंग लाली लिये हुए होता है और सारी पृथिवी तप्ती हुई दिखलाई देती है।

तीसरी वर्षाऋतु है जिसके अन्दर सूर्य की किरणें धुंधली हो जाती हैं और वर्षा होकर सर्व वृक्ष और बूटियाँ धुल जाती हैं और विशे हरे रंग की दिखती हैं।

चौथी शरद ऋतु है जिसमे अन्नादिक पक जाते हैं और मठियाले रंग को धारण करते हैं।

पांचवी शिशिर ऋतु है जिसमे सूखीशीत पड़ती है और आकाश 'अत्यंत नीला दिखता है।

छटी हेमंत ऋतु है जिसमे वर्षा सहित शीत पड़ती है और आकाश जलवत भूरेरंग का भासता है। षट् ऋतुओं के रुप पंचतत्वों के विशेष और सामान्य भाव से इस प्रकार बनते हैं

ऋतु	विशेषभाव			सामान्यभाव	
वसन्त	आकाश	पवन	पृथिवी	अग्नि	जल
ग्रीष्म	आकाश	पवन	अग्नि	जल	पृथिवी
वर्षा	आकाश	अग्नि	जल	पवन	पृथिवी
शरद	आकाश	अग्नि	पृथिवी	पवन	जल
शिशिर	आकाश	जल	पृथिवी	पवन	अग्नि
हेमन्त	आकाश	पवन	जल	अग्नि	पृथिवी

ऋतुओं के चक्र के बाहर एक और चक बना हुआ है जिसके तीन भाग पृथक पृथक रंग के हैं और वह एक वर्ष के तीन समयों को दिखाते हैं। उनके नाम ग्रीष्म, वर्षा और शिशिर कहलाते हैं और प्रत्येक समय में दोदो ऋतु मिश्रित हैं अर्थात बसन्त और ग्रीष्म दोनों ग्रीष्मकाल में गिने जाते हैं वर्षा और शरद वर्षाकाल के अन्तरगत हैं। शिशिर और हेमन्त को मिलाकर शिशिरमात्र कहते हैं।इन समयों का विभाग चन्द्रमास के अनुसार सिद्ध हुआ है। सब से ऊपर वाले चक्र के दोभाग हैं जिनमें से एक लाल और दूसरा काले रंग का है। लालभाग उत्तरायण और कालाभाग दक्षिणायन को दिखाता है और प्रथम देवताओं का दिन और दितीय देवताओं का रात्री माना गया है। वास्तव में जब मेरा स्थान पृथिवी से उत्तर दिशा में होता है तब भूमण्डल की उत्तरवाली चोटी पर छः मास पर्यंत दिन रहता है और दक्षिणवाली चोटी पर छः मास रात्रि रहती है। इसी प्रकार जब मैं पृथिवी के दक्षिण की ओर होता हूं तब भूमण्डल की दक्षिण वाली चोटी पर छःमास का दिन और उत्तर वाली चोटी पर छःमास की रात्रि व्यतीत होती है।

इसी विधि से दिन और रात्रि के अवसर का भेद पृथिवी के मध्य देशों की ओर घटता जाता है और भारतवर्ष में बड़े से बड़ा दिन ३५ घड़ी का और छोटी से छोटी रात्रि २५ घड़ी की उत्तरायण में हो जाती है और दक्षिणायन मे रात्रि ३५ घड़ी की और दिन २५ घड़ी का हो जाता है।

दिन के बडे होने से मैं दीर्घ काल तक पृथिवी को तपाता हूं और इस कारण ग्रीष्मसमय बनता है, काल के अन्तर

रात्रि के अधिक होने से मेरी किरणें पृथिवी पर थोड़े समय पड़ती हैं जिस कारण शीत की वृद्धि हो जाती है, जिस समय दिन और रात्रि परस्पर तुल्य होते हैं तब उष्णता और शीत का समभाव रहता है और ३० घड़ी के प्रत्येक दिन और रात होते हैं उस समय मेरा स्थान पृथिवी की मध्य दिशा में समझना चाहिये।

मेरे प्रभाव से दो आयन, तीन समय और छःऋतु रचे जाते हैं रात्रि और दिनका विभाग सिद्ध होता है और शीत और उष्णता और वर्षा द्वारा अनेक प्रकार के अन्न की उत्पत्ति होकर प्राणियों का जीवन भूलोक मे बनता है और जगत् की सारी क्रिया सिद्ध होती हैं। भूमंडल के निवासियों का मलविक्षेप मुझमें प्रवेश नहीं करता क्योंकि मेरी शक्ति जिसका नाम पावक है सर्व अशुद्धियों को दग्ध कर देती है। मृतक देह का दाह संसार में चार प्रकार से होता है पवनदाह, अग्निदाह, जलदाह, और पृथिवीदाह उनमें से अग्निदाह से देह के परमाणु बहुत शीघ्र शुद्ध होकर अपने अपने तत्वों में जा मिलते हैं और इनसे किसी प्रकार की अशुद्धि और रोग नहीं फैलता और अन्य 'तीनप्रकार के दाहों से देह के परमाणु विकार को प्राप्त हो कर बहुत काल के पीछे अपने तत्वों में पहुंचते हैं और मृतक देह में जो रोग अथवा विकार होते हैं वह और स्थानों में फैल सकते हैं।

मैंने जो ऊपर आयनों का वर्णन किया है उसका संवन्ध मेरी स्थूल मूर्ति से है। चर्म दृष्टि रूपमात्र को दिखाती है परन्तु विचार और अनुभव से उत्तरायण और दक्षिणायन के अर्थ विलक्षण सिद्ध होते है। यदि यह माना जाए कि उत्तरायण के समय जो मनुष्य देह का त्याग करता है वह अवश्य ब्रह्मलोक में पहुंचता है और जो दक्षिणायन मे मृत्यु को प्राप्त होता है वह पितृलोक में जाता है तो संसार का पुरुषार्थ ब्रह्मविद्या की प्राप्ति के निमित्त समय आधीन हो जाता है और ज्ञानी और अज्ञानी की अवस्थाओं में अन्तर नही रहता। ऐसी कल्पना अनिश्चय रूप और मिथ्या है। अब आप लोग मेरी सूक्ष्मगति को अध्यात्म रूप से विचारें कि मेरा उदय और अस्त प्रत्येक श्वासा में होता है और उन दोनों अवस्थाओं का वर्णन अग्नि और धूंआ, दिन और रात, शुक्ल पक्ष और कृष्ण पक्ष, उत्तरायण और दक्षिणायन आदि दो दो शब्दों के संयोग से महात्माओं ने किया है। प्रथम गति को अनुभव का स्वरूप और दूसरी को श्रुति का रूप जानना चाहिये। जिन महापुरुषों को धारणा द्वारा अनुभव सिद्ध हो जाता है वह बह्मलोक को प्राप्त होते हैं और जो श्रुति द्वारा संकल्प में बंधे रहते हैं उनकी ब्रह्मलोक तक पहुंच नहीं होती और उनका चन्द्रमंडल में प्रवेश होता है और संकल्प के बीज से जो उनमें सूक्ष्म रूप हो कर रहता है वह फिर मृर्त्युलोक में खिंच आते हैं। यही पित्रों का मार्ग कहलाता है।

सारांश यह है कि ज्ञान की अवस्था को उत्तरायण और अज्ञान की गति को दक्षिणायन का शब्द जताता है और बुद्धिमानों के लिये इतना ही वर्णन बहुत कुछ दर्शाता है।